श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः

श्रुत स्कन्ध विधान

रचयिता :

परम पूज्य साहित्य रत्नाकर क्षमामूर्ति

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

कृति – **श्रुत स्कन्ध विधान**

कृतिकार – प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण – द्वितीय -2018 ● प्रतियाँ :1000

संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोग – आर्यिका 105 श्री भक्तिभारती, ऐलक 105 श्री विदक्षसागर जी
क्षुल्लक 105 श्री विसोमसागरजी, क्षुल्लिका 105 श्री वात्सल्य भारती

संपादन – ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी
सपना दीदी, आरती दीदी

सम्पर्क सूत्र – 09829127533, 09829076085

प्राप्ति स्थल – 1. सुरेश जी सेठी,
पी-958, गली नं. 3, शांति नगर, जयपुर मो. 9413336017

2. विशद साहित्य केन्द्र
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर, कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान ● मो.: 09416882301

3. लाल मंदिर, चाँदनी चौक, दिल्ली

4. जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561, नेहरू गली, गाँधी नगर, दिल्ली
मो. 9818115971

मूल्य – 31/- रु. मात्र

सौजन्य से :

.....

मुद्रक : राजू ग्राफिक आर्ट (संदीप शाह), जयपुर ● फोन : 2313339, मो.: 9829050791

मूलनायक सहित समुच्चय पूजन

(स्थापना)

तीर्थंकर कल्याणक धारी, तथा देव नव कहे महान्।
देव–शास्त्र–गुरु हैं उपकारी, करने वाले जग कल्याण॥
मुक्ती पाए जहाँ जिनेश्वर, पावन तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
विद्यमान तीर्थंकर आदिक, पूज्य हुए जो जगत प्रधान॥
मोक्ष मार्ग दिखलाने वाला, पावन वीतराग विज्ञान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, करते भाव सहित आह्वान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञान ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छंद)

जल पिया अनादी से हमने, पर प्यास बुझा न पाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरण शरण, अब नीर चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल रही कषायों की अग्नी, हम उससे सतत सताए हैं।
अब नील गिरी का चंदन ले, संताप नशाने आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण शाश्वत मम अक्षय अखण्ड, वह गुण प्रगटाने आए हैं।
निज शक्ति प्रकट करने अक्षत, यह आज चढ़ाने लाए हैं॥

जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों से सुरभी पाने का, असफल प्रयास करते आए।
अब निज अनुभूति हेतु प्रभु, यह सुरभित पुष्प यहाँ लाए॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण हैं व्यंजन सरस श्रेष्ठ, उनकी हम सुधि बिसराए हैं।
अब क्षुधा रोग हो शांत विशद, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञाता दृष्टा स्वभाव मेरा, हम भूल उसे पछताए हैं।
पर्याय दृष्टि में अटक रहे, न निज स्वरूप प्रगटाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो गुण सिद्धों ने पाए हैं, उनकी शक्ती हम पाए हैं।
अभिव्यक्त नहीं कर पाए अतः, भवसागर में भटकाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव–शास्त्र–गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम से भी उत्तम शुभ, शिवफल हे नाथ ना पाए हैं।
कर्मों कृत फल शुभ अशुभ मिला, भव सिन्धु में गोते खाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद है अनर्घ मेरा अनुपम, अब तक यह जान न पाए हैं।
भटकाते भाव विभाव जहाँ, वह भाव बनाते आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव 'विशद', जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्योः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- प्रासुक करके नीर यह, देने जल की धार।
लाए हैं हम भाव से, मिटे भ्रमण संसार॥ शान्तये शांतिधारा..

दोहा- पुष्पों से पुष्पाञ्जली, करते हैं हम आज।
सुख-शांति सौभाग्यमय, होवे सकल समाज॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पञ्च कल्याणक के अर्घ

तीर्थंकर पद के धनी, पाए गर्भ कल्याण।
अर्चा करे जो भाव से, पावे निज स्थान॥1॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा जन्म कल्याण की, होती अपरम्पार।
पूजा कर सुर नर मुनी, करें आत्म उद्धार॥2॥

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप कल्याणक प्राप्त कर, करें साधना घोर।
कर्म काठ को नाशकर, बढ़ें मुक्ति की ओर॥3॥

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रगटाते निज ध्यान कर, जिनवर केवलज्ञान।
स्व-पर उपकारी बनें, तीर्थंकर भगवान॥4॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्म विनाश कर, पाते पद निर्वाण।
भव्य जीव इस लोक में, करें विशद गुणगान॥5॥

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- तीर्थंकर नव देवता, तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
देव शास्त्र गुरुदेव का, करते हम गुणगान॥

(शम्भू छन्द)

गुण अनन्त हैं तीर्थंकर के, महिमा का कोई पार नहीं।
तीन लोकवर्ति जीवों में, और ना मिलते अन्य कहीं॥
विंशति कोड़ा-कोड़ी सागर, कल्प काल का समय कहा।
उत्सर्पण अरु अवसर्पिण यह, कल्पकाल दो रूप रहा॥1॥
रहे विभाजित छह भेदों में, यहाँ कहे जो दोनों काल।
भरतैरावत द्वय क्षेत्रों में, कालचक्र यह चले त्रिकाल॥
चौथे काल में तीर्थंकर जिन, पाते हैं पाँचों कल्याण।
चौबिस तीर्थंकर होते हैं, जो पाते हैं पद निर्वाण॥2॥
वृषभनाथ से महावीर तक, वर्तमान के जिन चौबीस।
जिनकी गुण महिमा जग गाए, हम भी चरण झुकाते शीश॥
अन्य क्षेत्र सब रहे अवस्थित, हों विदेह में बीस जिनेश।
एक सौ साठ भी हो सकते हैं, चतुर्थकाल यहाँ होय विशेष॥3॥
अर्हन्तों के यश का गौरव, सारा जग यह गाता है।
सिद्ध शिला पर सिद्ध प्रभु को, अपने उर से ध्याता है॥
आचार्योपाध्याय सर्व साधु हैं, शुभ रत्नत्रय के धारी।
जैनधर्म जिन चैत्य जिनालय, जिनवाणी जग उपकारी॥4॥

प्रभु जहाँ कल्याणक पाते, वह भूमि होती पावन।
वस्तु स्वभाव धर्म रत्नत्रय, कहा लोक में मनभावन।।
गुणवानों के गुण चिंतन से, गुण का होता शीघ्र विकाश।
तीन लोक में पुण्य पताका, यश का होता श्रेष्ठ प्रकाश।।5।।
वस्तू तत्त्व जानने वाला, भेद ज्ञान प्रगटाता है।
द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, शुभ वैराग्य जगाता है।।
यह संसार असार बताया, इसमें कुछ भी नित्य नहीं।
शाश्वत सुख को जग में खोजा, किन्तू पाया नहीं कहीं।।6।।
पुण्य पाप का खेल निराला, जो सुख-दुख का दाता है।
और किसी की बात कहें क्या, तन न साथ निभाता है।।
गुप्ति समिति अरु धर्मादिक का, पाना अतिशय कठिन रहा।
संवर और निर्जरा करना, जग में दुर्लभ काम कहा।।7।।
सम्यक् श्रद्धा पाना दुर्लभ, दुर्लभ होता सम्यक् ज्ञान।
संयम धारण करना दुर्लभ, दुर्लभ होता करना ध्यान।।
तीर्थंकर पद पाना दुर्लभ, तीन लोक में रहा महान्।
विशद भाव से नाम आपका, करते हैं हम नित गुणगान।।8।।
शरणागत के सखा आप हो, हरने वाले उनके पाप।
जो भी ध्याए भक्ति भाव से, मिट जाए भव का संताप।।
इस जग के दुख हरने वाले, भक्तों के तुम हो भगवान।
जब तक जीवन रहे हमारा, करते रहें आपका ध्यान।।9।।

दोहा- नेता मुक्ती मार्ग के, तीन लोक के नाथ।
शिवपद पाने नाथ ! हम, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ..... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घपदप्राप्त्ये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- हृदय विराजो आन के, मूलनायक भगवान।
मुक्ती पाने के लिए, करते हम गुणगान।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्रुत स्तवन

दोहा - जिनवाणी को नमन् कर, करूँ तत्त्व का ज्ञान।
विशद भाव से कर रहे, श्रुत स्कंध विधान।।
द्वादशांग श्रुत ज्ञान है, अंग प्रविष्टि बाह्य।
भव्य जीव के लिए है, शुभ भावों से ग्राह्य।।

अष्टक (सुन्दरी छंद)

सोलह कारण भावना जिन, पूर्व भव में भाई जी।
मोक्ष पद के हेतु तीर्थंकर, प्रकृति शुभ पाई जी।।1।।
ज्ञान के अभ्यास से पाया है, एकत्व ध्यान जी।
नाश करके कर्म घाती, पाया केवल ज्ञान जी।।2।।
भव समुद्र से पार पाकर, करते सबको पार जी।
संसार सागर पार होने में, प्रभु आधार जी।।3।।
पुण्य का फल है शुभम् जो, तीर्थ पद जिन पाय जी।
सुर इन्द्र गण मिलकर सभी ने, समवशरण बनाय जी।।4।।
शुभ दिव्य ध्वनि सुनकर प्रभु की, होते भाव विभोर जी।
योजन शतक के प्राणियों में, हर्ष हो चऊँ ओर जी।।5।।
जिनदेव की वाणी में आया, काल दोष से ह्रास जी।
है एक अंग का अंश कुछ ही, श्रुत हमारे पास जी।।6।।
उस ज्ञान का आधार लेकर, पूजते श्रुतज्ञान जी।
भावों को अपने शुद्ध करना, आत्म का कल्याण जी।।7।।
श्री मोक्षपद का मूल है यह, द्रव्य भाव श्रुतज्ञान जी।
हो प्राप्त केवल ज्ञानश्रुत से, कर रहे गुणगान जी।।8।।

दोहा

तीर्थंकर की देशना, आगम रहा महान्।
गणधर ने वर्णन किया, द्रव्य भाव श्रुत ज्ञान।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री श्रुत पंचमी पूजन

स्थापना

श्री जिनेन्द्र की दिव्य देशना, मंगलमय मंगलकारी।
स्याद्वाद अरु अनेकान्तमय, द्वादशांग युत मनहारी॥
श्री धरसेनाचार्य के मन में, जीवों पर करुणा जागी।
दिव्य देशना रहे सुरक्षित, मन में श्रेष्ठ लगन लागी॥
अंकलेश्वर में षट् खण्डागम, ग्रन्थ का लेखन हुआ शुरू।
लिपिबद्ध करने वाले थे, पुष्पदन्त भूतबली गुरु॥
ज्येष्ठ शुक्ल दिवस पंचम को, पूर्ण हुआ श्रुत का लेखन।
पर्व बना श्रुत पंचमी पावन, श्रुत का करते आह्वानन्॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डा-गम ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डा-गम ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डा-गम ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

पुष्पाजलिं क्षिपेत्

ज्यों-ज्यों हमने जल पान किया, त्यों-त्यों आशा की प्यास जगी।
नित प्राप्त विषय विष भोगों से, बहु राग द्वेष की आग लगी॥
शुद्धातम सा परिशुद्ध अमल, यह नीर चरण में लाये हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥1॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम जन्म, जरा, मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

मैं पाप शाप में दबा रहा, निज आतम को न पहिचाना।
जो रहा स्वयं से भिन्न अन्य, उसको मैंने अपना माना॥
हम क्रोधानल के शमन हेतु, शुभ चंदन घिसकर लाये हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अक्ष विषय में लीन रहे, उनको ही अक्षय सुख माना।
अभिमान किया हमने तन का, अब अन्त रहा बस पछताना॥

अब मद की दम के दमन हेतु, हम अक्षय अक्षत लाए हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

है काम बली का महा वेग, उसने सदियों से भरमाया।
निज शक्ति का नित ह्रास किया, औ मन में भारी हरषाया॥
हम काम बाण विध्वंस हेतु, शुभ पुष्प संजोकर लाए हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥4॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम कामवाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना व्यंजन का भोग किया, पर क्षुधा रोग न शांत हुआ।
ज्यों-ज्यों भोजन में लिप्त हुआ, त्यों-त्यों मेरा मन क्लांत हुआ।
चरणों नैवेद्य चढ़ाने को, व्यंजन कई सरस बनाए हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगणित दीपों के द्वारा भी, संसार तिमिर न घट पाता।
इन नश्वर दीपों के द्वारा, अज्ञान तिमिर न हट पाता॥
अब ज्ञान का दीप जलाने को, हम जग-मग दीप जलाए हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

तीनों लोकों में दुःखों की, अत्यन्त दुखित ज्वाला जलती।
नित मोह कषायों की शक्ति, मम आतम को रहती छलती॥
हम धूप दशांगी शोधन कर, अग्नि में होम लगाए हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम अष्ट कर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों को अमृत फल माना, उसके सेवन में मस्त रहा।
विषयों की चाहत में नित प्रति, मैं व्यस्त रहा अभ्यस्त रहा॥
अब मोक्ष महाफल की आशा ले, सरस श्रीफल लाये हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं॥8॥

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने काल अनादी से, सारे जग में भटकाया है।
है नहीं कष्ट कोई ऐसा, जग में रहकर न पाया है।।
आठों द्रव्यों को एक मिला, हम अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
सन्तप्त हृदय हो शांत विशद, हम जिनश्रुत शरण में आए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम मम अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– श्रुतसागर का यह लिया, हमने पावन नीर।
शांतीधारा दे रहे, मिट जाए भव पीर।।

शांतये शांतिधारा....

दोहा– श्रुतज्ञान के बाग से लाए, सुरभित फूल।
पुष्पाञ्जलि से हों मेरे, कर्म सभी निर्मूल।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

जयमाला

दोहा– अरि नाशक अरिहन्त हैं, जिनवाणी ॐकार।
द्रव्य भाव श्रुत को नमूँ, करके जय-जयकार।।

(वीर छन्द)

हे जिनवाणी ! माता मेरी भक्तों पर दया प्रदान करो।
हम ज्ञान हीन अज्ञानी हैं, हम सबका अब कल्याण करो।।
श्री ऋषभ देव से महावीर तक, दिव्य ध्वनि खिरती आई।
गणधर जी ने गूंथित करके, इस भव्य जगत में फैलाई।।
महावीर के बाद केवली, दिव्य देशना दिए अनेक।
श्रुत केवली पाँच हुए फिर, उनने ज्ञान दिया अति नेक।।
अंग और पूरव के ज्ञाता, श्रेष्ठ हुए ग्यारह आचार्य।
पूर्वरहित कुछ हीन अंग के, ज्ञायक हुए सतत् आचार्य।।
जैनाचार्यों के द्वारा शुभ, श्रुत का निर्झर झरा अपार।
मोक्षमार्ग का भव्य जनों को, ज्ञान मिला है अपरम्पार।।
काल दोष के कारण लेकिन, जिनवाणी का ह्रास हुआ।
श्री धरसेनाचार्य गुरु के, मन में कुछ अहसास हुआ।।

द्वादशांग का लोप हुआ तो, क्या होगा संसार का।
अनेकांत का क्या होगा औ, क्या निश्चय व्यवहार का।।
लेखन हो जाए श्रुत का तो, अमर होएगी जिनवाणी।
श्रीधर सेनाचार्य ने मन में, लेखन करने की ठानी।।
अर्हद्वली आचार्य संघ से, दो मुनियों को बुलवाया।
पूर्ण परीक्षित करके उनसे, जिनवाणी को लिखवाया।।
लेखन हुआ ताड़पत्रों पर, षट्खण्डागम ग्रन्थ का।
अजर अमर हो गया सुयश, यह वीतराग निर्ग्रन्थ का।।
ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी दिवस को, स्वप्न पूर्ण साकार हुआ।
घर-घर मंगल वाद्य बजे अरु, नगर-नगर जयकार हुआ।।
धवला टीका वीरसेन कृत, सहस बहत्तर श्लोक प्रमाण।
जय धवला जिनसेन वीर कृत, साठ हजार श्लोक प्रमाण।।
महाधवल है देवसेन कृत, हैं श्लोक चालीस हजार।
विजय धवल अतिशय धवल का, प्राप्त नहीं श्लोक विचार।।
क्रमशः ऋषि मुनियों के द्वारा, ग्रन्थ लिखे कई ज्ञान प्रधान।
चारों ही अनुयोग के द्वारा, दिया जगत को करुणा दान।।
श्रुत पारंगत विद्वत श्रेष्ठी, सबने श्रुत का किया विकास।
आगे भी सब ऋषि मुनि अरु, विद्वत श्रेष्ठी करें प्रकाश।।
जिनवाणी की भक्ति करे अरु जिनश्रुत की महिमा गाएँ।
सम्यक्दर्शन की निधि पाकर, सम्यग्ज्ञानी बन जाएँ।।
रत्नत्रय के आलम्बन से, वसु कर्मों का नाश करें।
मोक्ष मार्ग पर गमन करें फिर, सिद्ध शिला पर वास करें।।

ॐ ह्रीं श्री श्रुतज्ञान षट् खण्डागम जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा जिनश्रुत की पूजा करूँ, जिनश्रुत है गुणवन्त।
जिनश्रुत मेरे उर बसे, नमन् अनन्तानन्त।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

श्रुत स्कंध विधान

स्थापना

है जिनवर वाणी जग कल्याणी, श्री जिनपद की वरदानी।
रत्नों की खानी, जानी मानी, करती कर्मों की हानी।।
भावों से ध्याऊँ जिन गुण गाऊँ, भाव सहित मैं सिर नाऊँ।
मैं हृदय बसाऊँ, शीश झुकाऊँ, जिन पद पदवी को पाऊँ।।
हे माँ ! गुण गाएँ, शीश झुकाएँ, तुमसे हम आशिष पाएँ।
न जगत् भ्रमाएँ, कर्म नशाएँ, शिव सुख पाने शिव जाएँ।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हं जिनेन्द्र कथित गणधरदेव रचित जिनागम अशेष ज्ञान सम्पूर्ण आगम अत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानन्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितौ भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

नरेन्द्र–छन्द

प्रासुक जल गंगा का लेकर, मन में अति हर्षाये।
द्रव्य भाव मय श्रुत की पूजा, करने को हम आये।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र कथित दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव तापों से तप्त हुए हम, कर्मों से रहे सताए।
परम सुगन्धित चंदन लेकर, चरण शरण में आए।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

खण्ड–खण्ड पद में अटके हैं, पद अखण्ड न पाये।
अक्षय पद पाने को अक्षत, अक्षय लेकर आये।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कामबली के वश में होकर, सारा जग भटकाए।
कामबाण विध्वंश हेतु हम, पुष्प मनोहर लाए।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा तृषा की महा वेदना, सहन नहीं कर पाए।
क्षुधा नाश करने को षट्रस, व्यंजन लेकर आए।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तिमिर ने घेरा जग में, दर–दर ठोकर खाए।
मोह महातम नाश करन को, दीप जलाकर लाए।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भव–भव में हम भटक रहे हैं, आठों कर्म सताए।
अष्ट गंध युत धूप जलाने, तव चरणों में आए।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल की इच्छा लेकर सारे, जग में हम भरमाये।
मोक्ष महाफल पाने हेतू, श्री फल लेकर आये।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय महामोक्ष फल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन आदिक द्रव्यों को, एक मिलाकर लाए।
पद अनर्घ पाने के मन में, भाव संजोकर आए।।
ॐकार मय जिनवाणी को, अपने हृदय बसाएँ।
प्रमुदित होकर विशद भाव से, पूजा आज रचाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा – **दिव्य ध्वनि को झेलकर, गणधर किया बखान।**
भक्ति भाव मय पूजते, द्वादशांग श्रुत ज्ञान।।

(चौपाई)

जय ऋषभ देव ऋषिवर प्रधान, तुम पाया केवल ज्ञान भान।
फिर दिव्य देशना किए देव, शत् इन्द्र करें तव चरण सेव।।
क्रमशः चौबिस जिन दिये ज्ञान, वह जिनवर पाए मोक्ष भान।
कार्तिक की अमावश प्रातकाल, बन गया वीर निर्वाणकाल।।
फिर सांझ समय गौतम मुनीश, जो विशद ज्ञान के हुए ईश।
अनुबद्ध केवली हुए तीन, जो निज आतम में हुए लीन।।
कई केवलज्ञानी हुए संत, श्रुतधारी पाँच हुए सुसंत।
फिर आचार्यों ने दिया ज्ञान, कई हुए संत ज्ञानी महान्।।
सब मौखिक किए धर्मोपदेश, धरसेन के मन में लगी ठेस।
हो रहा ज्ञान का बहुत ह्रास, अंगांश ज्ञान था उनके पास।।

वह सोच समझ कीन्हा विचार, अब लिखा जाए तत्त्वों का सार।
अर्हद्बली जी आचार्य महान्, जो सब संतों में थे प्रधान।।
तब लिखकर भेजा शुभ संदेश, दो संत भेजिए ज्ञानी विशेष।
आ गये भूतबली पुष्पदंत, थे ज्ञानी ध्यानी श्रमण संत।।
गुरूवर का जो सम्मान किए, श्रुत विद्या गुरु प्रदान किए।
वह श्रुत को लिपिबद्ध कीन्हे, श्रुत ताड़ पत्र पर लिख दीन्हे।।
षट्खण्डागम से महाग्रन्थ, जो श्रुत के मानो मूल मंत्र।
यों श्रुत ज्ञान हो गया उदित, हो गये भक्त सब ही प्रमुदित।।
शुभ ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी दिवस, बन गया पर्व यों ही बरवश।
तब भक्त सभी मिल जय बोले, और हृदय पटल के पट खोले।।
फिर रथ पर शास्त्र सवार किए, और नगर–नगर में जले दिए।
औ भक्तों के मन हर्षाए, फिर पुष्प सुगंधित बर्षाए।।
यह पर्व बना मंगलकारी, जो श्रुत ज्ञान के अवतारी।।
हम श्रुत की जय जयकार करे, अरु सेवाकर उपकार करें।।
हम भाव सहित गुणगान करें, शुभ पूजन और विधान करें।
हम शास्त्रों का भी दान करें, निज आतम का कल्याण करें।।

(छन्द घत्तानन्द)

दीजे सुख साता, ज्ञान प्रदाता, श्रुत देवी तव नमन् करूँ।
अज्ञान नशाऊँ ज्ञान जगाऊँ, अपने सारे कर्म हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दिव्यध्वनि सम्पन्न परम अंग बाह्य अंग प्रविष्टि रूप द्वादशांग श्रुतज्ञानाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा – **जिनवाणी जिन भारती, तुमको करूँ प्रणाम।**
जैनागम को पूजकर, पाऊँ मुक्ति धाम।।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

अर्घ्यावली (प्रथम कोष्ठ)

दोहा – **करते हैं प्रारम्भ अब, श्रुत स्कन्ध विधान।**
पुष्पांजलि करते प्रथम, आगम का करने गुणगान।।

(प्रथम कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

मतिज्ञान की स्तुति

(वीर छंद)

इन्द्रिय मन के योग से होता, सम्यक् मति ज्ञान पावन।
अवग्रह ईहा अवाय धारणा, चार भेद अति मन भावन।।
बहु–बहुविध अरु क्षिप्र अनिःश्रित, ध्रुव अनुक्त के भी विपरीत।
तीन सौ छत्तीस भेद रूप है, भवि जीवों का है शुभ मीत।।1।।

ॐ ह्रीं जिन मुखोद्भव गणधर गूंथित त्रि शत् षट् त्रिंशत् भेद रूप मति ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुतज्ञान की स्तुति

जिनवर कथित सुगणधर गूंथित, अंग अंगबाह्य श्रुत ज्ञान।
द्वादश भेद अनेक भेद मय, ज्ञायकऽनन्त विषय सुख धाम।।
अनेकांत अरु स्याद्वाद मय, श्रुत का करते हम गुणगान।
श्रुतज्ञान को वन्दन मेरा, करने आतम का कल्याण।।2।।

ॐ ह्रीं जिन मुखोद्भव गणधर गूंथित द्वादशांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

एकादश अंग वर्णन

आचारांग मुनि चर्या का, जिसमें है सम्पूर्ण कथन।
समिति गुप्ति व्रत शुद्धी का भी, इसमें है पूरा वर्णन।।
सहस अठारह पद हैं इसके, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।3।।

ॐह्रीं अष्टादश सहस्र पद भूषित प्रथम आचारांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दूजा सूत्र कृतांग शुभम् है, ज्ञान विनय का जिसमें सार।
क्या है कल्प अकल्प ज्ञानमय, धर्म रूप कैसा व्यवहार।।
जिसके पद छत्तीस सहस हैं, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।4।।

ॐह्रीं षट्त्रिंशत् सहस्र पद भूषित द्वितीय सूत्र कृतांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

स्थानांग तीसरा पद है, देख शोध थल पर चलना।
एक–एक दो रूप हैं पावन, शब्द अर्थ मय ही ढलना।।
पद ब्यालीस सहस हैं जिसके, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।5।।

ॐह्रीं द्विचत्वारिंशत् सहस्र पद भूषित तृतीय स्थानांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चौथा समवायांग शास्त्र है, द्रव्य क्षेत्र अरु भाव प्रधान।
धर्माधर्माकाश जीव के, असंख्य प्रदेश का रहा प्रमाण।।
एक लाख चौसठ हजार हैं, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।6।।

ॐ ह्रीं एक लक्ष चतुः षष्ठि सहस्र पद भूषित चतुर्थ समवायांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम अंग व्याख्या प्रज्ञप्ति, विज्ञान मयी जो है पावन।
साठ हजार प्रश्न जीवादिक, उत्तर सहित जो मन भावन।।
लाख दोय अट्ठाईस सहस मय, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।7।।

ॐ ह्रीं द्वय लक्ष अष्टाविंशति सहस्र पद भूषित पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति अंग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर आदिक पुरुषों के, गुण वैभव का किया कथन।
ज्ञातृ धर्म कथांग है षष्टम, धर्म कथाओं का वर्णन।
पाँच लाख छप्पन हजार पद, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।8।।

ॐ ह्रीं पंच लक्ष षड् पंचाशत् सहस्र पद भूषित ज्ञातृ धर्म कथांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम अंग उपासकाध्ययन, श्रावक चर्या का वर्णन।
मूल गुणों अरु कर्त्तव्यों का, जिसमें है सम्पूर्ण कथन।।
ग्यारह लाख सत्तर हजार शुभ, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं एकादश लक्ष सप्तति सहस्र पद भूषित सप्तम उपासकाध्यनांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तः कृत् दशांग अष्टम है, उपसर्ग विजय का करे प्रकाश।
प्रति तीर्थंकर काल में दश–दश, अन्तः कृत केवलि का वास।।
तेईस लाख अट्ठाईस हजार शुभ, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।10।।

ॐ ह्रीं त्रयोविंशति लक्ष अष्टाविंशति सहस्र पद भूषित अष्टम अन्तः कृतदशांग अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुत्तरोपपादिक दशांग नवम् है, विजयादि अनुत्तर में वास।
प्रति तीर्थंकर काल में दश–दश, उपसर्ग विजय का करें प्रकाश।।
लाख बानवे सहस्र चवॉलिस, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं द्वय नवति चतुः चत्वारिंशत् सहस्र पद भूषित नवम अनुत्तरोपपादिक दशांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्नव्याकरण अंग दशम है, प्रश्नोत्तर युत पूर्ण कथन।
आक्षेप और विक्षेपवाद का, जिसमें है पूरा वर्णन।।
तिरानवे लाख सोलह हजार शुभ, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।12।।

ॐ ह्रीं त्रि नवति लक्ष षष्टदश सहस्र पद भूषित दशम व्याकरणांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपाक सूत्र शुभ अंग एकादश, पुण्य पाप फल का द्योतक।
हित और अहित शुभाशुभ का जो, शास्त्र परम है उद्योतक।।
एक करोड़ सुलाख चौरासी, श्रुत पद को मैं सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।13।।

ॐ ह्रीं एक कोटि चतुः अशीति लक्ष पद भूषित विपाक सूत्रांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली (द्वितीय कोष्ठ)

दोहा – **दृष्टिवाद शुभ अंग का, करते अब व्याख्यान।**
पुष्पांजलि करते विशद, पाने सम्यक् ज्ञान।।

(द्वितीय कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

दृष्टिवाद है द्वादशांग जो, मिथ्यातम का है नाशक।
त्रेसठ सहित तीन सौ मत का, नाशक है जिन परकाशक।।
सौ अरु आठ कोटि लख अड़सठ, छप्पन हजार पद सिरनाऊँ।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्याऊँ गाऊँ हर्षाऊँ।।14।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक शत् कोटि अष्ट षष्टि लक्ष षट्पंचाशत सहस्र पंच पद भूषित दृष्टिवाद श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश अंग हैं श्रुतज्ञान मय, उनको अपने उर में धार।
अर्घ्य चढ़ावें भक्ति भाव से, वे हो जाते भव से पार।।
सौ अरु द्वादश कोटि तिरासी, लाख अट्ठावन सहस्र अरु पाँच।
इनका भाव ज्ञान करने से, क्षय होती है भव की आँच।।15।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिक शत् कोटि त्र्यसीति लक्ष अष्ट पंचाशत सहस्र पंच पद भूषित सर्व द्वादशांग श्रुतज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टिवाद के भेद

(मदावलिप्त कपोल छन्द)

दृष्टिवाद के भेद पंच, परिकर्म प्रथम है।
द्वितीय सूत्र अनुयोग, पूर्वगत भी अनुपम है।।
पंचम भेद चूलिका जानो, श्रुत गणधर को।
द्वादशांग कल्याणमयी है, जग के नर को।।16।।

ॐ ह्रीं पंच भेद सहित दृष्टिवादांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा छन्द)

भेद पांच परिकर्म के, चन्द्र प्रज्ञप्ति जान।
द्वितीय सूर्य प्रज्ञप्ति अरु, जम्बूद्वीप तृतियान्।।
दीप समुद्र प्रज्ञप्ति चउ, व्याख्या पंचम मान।
श्रुत की पूजा कर सदा, हो कर्मों की हान।।17।।

ॐ ह्रीं पंचभेद सहित परिकर्म सूत्र श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद चन्द्र प्रज्ञप्ति में, चन्द्र आयु परिवार।
ऋद्धि बिम्ब ऊँचाई गति, आदि का सब सार।।
पद छत्तीस सुलक्ष्य युत, पंच सहस्र प्रमाण।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।18।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत् लक्ष पंच सहस्र पद भूषित प्रथम चन्द्र प्रज्ञप्ति परिकर्मश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद सूर्य प्रज्ञप्ति में, भोग आयु का सार।
ऋद्धि बिम्ब ऊँचाई गति, आदि कथन का सार।।
पाँच लाख अरु तिय सहस्र, है श्रुत का परिमाण।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।19।।

ॐ ह्रीं पंच लक्ष त्रि सहस्र पद भूषित द्वितीय सूर्य प्रज्ञप्ति परिकर्मश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बू दीप प्रज्ञप्ति में, नर पशु द्रह का सार।
भोग भूमि अरु कर्म भू, भूधर का विस्तार।।
तीन लाख पच्चीस सहस्र, श्रुत का है व्याख्यान।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।20।।

ॐ ह्रीं त्रि लक्ष पंचविंशति सहस्र पद भूषित तृतीय जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति परिकर्मश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप समुद्र प्रज्ञप्ति में, सागर दीप प्रमाण।
नाना विधी पदार्थ का, पूर्ण कथन पहचान।।
पद श्रुत बावन लाख हैं, सहस छत्तीस प्रमाण।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।21।।

ॐ ह्रीं द्वि पंचाशत् लक्ष षट्त्रिंशत् सहस्र पद भूषित चतुर्थ दीप समुद्र प्रज्ञप्ति परिकर्म श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है व्याख्या प्रज्ञप्ति में, धर्माधर्माकाश।
भव्याभव्य सुजीव अरु, काल द्रव्य अविनाश।।
पद चौरासी लाख हैं, सहस्र छत्तीस प्रमाण।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।22।।

ॐ ह्रीं चतुरशीति लक्ष षट्त्रिंशत् सहस्र पद भूषित पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति परिकर्म श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच भेद परिकर्म के, है प्रसिद्ध श्रुत ज्ञान।
हेतु सम्यक् ज्ञान के, जग में सर्व महान्।।
कुल पद संख्या कोटि अरु, लाख इक्यासी जान।
पाँच हजार निलय के, जिन आज्ञा का ज्ञान।।23।।

ॐ ह्रीं एक कोटि एकाशीति लक्ष पंच सहस्र पद भूषित पंच परिकर्म श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय भेद सद् सूत्र में, जीव अबन्धक जान।
कर्त्ताभोक्ता भी नहीं, मिथ्या मत का ज्ञान।।

पद अट्ठासी लाख हैं, जिन श्रुत में व्याख्यान।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।24।।

ॐ ह्रीं अष्टाशीति लक्ष पदभूषित द्वितीयसूत्र अधिकार श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तृतीय प्रथमानुयोग में, पुण्य कथा का सार।
त्रेशठ शलाका पुरूष का, जिसमें है विस्तार।।
पद हैं पाँच हजार पर, भारी महिमावान।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव सौं, पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।25।।

ॐ ह्रीं पंच सहस्र पद भूषित प्रथमानुयोग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली (तृतीय कोष्ठ) चौदह पूर्व वर्णन

चौदह भेद सुपूर्व के, उत्पाद अग्रायणी जान।
वीर्यानुवाद अस्ति–नास्ति अरु, ज्ञान सत्य पहिचान।।
आत्म कर्म प्रत्याख्यान औ, विद्यानुवाद कल्याण।
प्राणवाय क्रिया विशाल अरु, लोकबिन्दु सार जान।।

(तृतीय कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(रोला छन्द)

प्रथम भेद उत्पाद पूर्व में, पुद्गल द्रव्य का।
जीवों के उत्पाद कथन, स्वरूपादिक का।।
हैं करोड़ पद वस्तु दश, सौ प्राभृत गाए।
जिनवाणी को भक्ति भाव से, शीश झुकाए।।26।।

ॐ ह्रीं एक कोटि पद भूषित प्रथम उत्पाद पूर्व श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

द्वितीय अग्रायणी पूर्व में, स्वसमय कथन है।
क्रियावाद की किरिया का, सुन्दर दर्शन है।।
चौदह वस्तु दो सौ अस्सी, प्राभृत गाए।
लाख छियानवे पद भक्ति मय, शीश झुकाए।।27।।

ॐ ह्रीं षड्नवति लक्ष पद भूषित द्वितीय अग्रायणीय पूर्व श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वीर्यानुवाद में छद्मस्थों का, किया कथन है।
आत्मवीर्य पर वीर्य शक्ति, का भी वर्णन है।।

आठ वस्तुगत वस्तु शत्, वसु प्राभृत गाए।
सत्तर लाख सुपद में, अपना शीश झुकाए।।28।।

ॐ ह्रीं सप्तति लक्ष पद भूषित तृतीय वीर्यानुवाद पूर्व श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्ति नास्ति प्रवाद में, नय के भेद बताए।
अस्ति नास्ति और अस्तिकाय, के भेद गिनाए।।
अष्टादश वस्तु त्रय शत्, अस्सी प्राभृत गाए।
साठ लाख पद को भक्ति, मय शीश झुकाए।।29।।

ॐ ह्रीं षष्टि लक्ष पद भूषित चतुर्थ अस्ति–नास्ति प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानप्रवाद में आठों ज्ञानों, का वर्णन है।
इन्द्रिय आदि के भेदों का, दिग्दर्शन है।।
वस्तु बारह भेद युक्त शत्, प्राभृत गाए।
पद हैं एक करोड़ भावसौं, शीश झुकाए।।30।।

ॐ ह्रीं नव नवति लक्ष नव नवति सहस्त्र नव शत् नव नवतिपद भूषित पंचम ज्ञान प्रवाद पूर्व श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्टम सत्य प्रवाद में, सत्यासत्य कथन है।
भाव वचन गुप्ति अरु सत्य का, दिग्दर्शन है।।
द्वादश वस्तु भेद का चालिस, प्राभृत गाए।
पद हैं एक करोड़ भाव सौं, शीश झुकाए।।31।।

ॐ ह्रीं एक कोटि पद भूषित षष्टम सत्य प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आत्मप्रवाद में आत्म द्रव्य का, कथन मनोहर।
षट् कायिक जीवों का वर्णन, किया है सुन्दर।।
वस्तु सोलह विंशति त्रय शत्, प्राभृत गाए।
पद छब्बिस कोटि में, हम सब शीश झुकाए।।32।।

ॐ ह्रीं षड्विंशति कोटि पद भूषित सप्तम आत्म प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म प्रवाद में कर्म बन्ध शत्, उदय बताये।
स्थिति उदीरणा शक्ति नाश की, कथनी गाए।।
बीस वस्तु गत जान चार सौ, प्राभृत गाए।।
पद हैं एक करोड़ भाव से, शीश झुकाए।।33।।

ॐ ह्रीं एक कोटि अशीति लक्ष पद भूषित अष्टम कर्म प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवमा प्रत्याख्यान पाप का, है परिहारी।
नियम प्रतिक्रम तप आराधन, व्रत का धारी।।
तीन वस्तु गत जान चार सौ, प्राभृत गाए।
पद हैं एक करोड़ भाव से, शीश झुकाए।।34।।

ॐ ह्रीं चतुरशीति लक्ष पद भूषित नवम प्रत्याख्यान पूर्व श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्यानुवाद में मंत्र तंत्र, विद्या की सिद्धि।
समुद्घात रज्जू राशि की, क्षेत्र प्रसिद्धि।
वस्तु पन्द्रह जान तीन सौं, प्राभृत गाए।
एक लाख दश पद में, अपना शीश झुकाए।।35।।

ॐ ह्रीं एक कोटि दश लक्ष पद भूषित दशम विद्यानुवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्याणवाद में सूर्य चन्द्र, नक्षत्र की चर्चा।
पुण्य पुरुष का कथन और कल्याणक की अर्चा।।
वस्तुगत हैं दश दो सौ जिन प्राभृत गाए।
पद छब्बीस करोड़ भाव सौं शीश झुकाए।।36।।

ॐ ह्रीं षड्विंशति कोटि पद भूषित एक दशम कल्याणवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणवाद में स्वास्थ्य और इस, तन का वर्णन।
अष्टांग आयुर्वेद और, प्राणायाम के लक्षण।।
वस्तुगत हैं दश दो सौ, जिन प्राभृत गाए।
तेरह कोटि सुपद में, भाव सौं शीश झुकाए।।37।।

ॐ ह्रीं त्रयोदश कोटि पद भूषित द्वादशम प्राणवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रिया विशाल में काव्य शिल्प, लेखन औ विद्या।
कला बहत्तर नर नारी में, चौसठ विद्या।।
वस्तुगत हैं दश सौ दश, जिन प्राभृत गाए।
नौ करोड़ पद में भावों से, शीश झुकाए।।38।।

ॐ ह्रीं नव कोटि पद भूषित त्रयोदशम क्रिया–विशाल पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक बिन्दु शुभ सार में, वसु व्यवहार का वर्णन।
श्रुत सम्पत्ति परिकर्म, गणित राशि का लक्षण।।
वस्तुगत दश हैं दो सौ, जिन प्राभृत गाए।
ढाई कोटि पद में, भावों से शीश झुकाए।।39।।

ॐ ह्रीं द्वादश कोटि पंचाशत् लक्ष पद भूषित चर्तुदशम् लोक बिंदुसार पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा छन्द)

अड़सठ शत् इक वस्तुगत, प्राभृत तीन हजार।
छह सौ अड़सठ जोड़ कर, करिए तत्त्व विचार।।
लाख पचास सु पाँच पद, अरु पंचानवे कोड़।
चौदह पूर्व को अर्घ्य दूँ, भक्ति भाव कर जोड़।।40।।

ॐ ह्रीं सर्व एक शत् अष्टषष्ठि वस्तुगत त्रि सहस्र षट्शत् अष्टषष्ठि प्राभृत मय पंच नवति कोटि पंचाशत् लक्ष पंच पद भूषित चतुर्दश पूर्व श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली (चतुर्थ कोष्ठ) पंच चूलिका वर्णन

दोहा – **जल थल मायागता अरु, रूपगता आकाश।**
पंच भेद मय चूलिका, दृष्टिवाद के खास।।

(चतुर्थ कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(गीता छंद)

जलगता जल में गमन, स्तंभनादि तप महा।
शुभ मंत्र तंत्र आदि का वर्णन, वीर ने जिसमें कहा।।
पद कोटि दो, नौ लाख उन्यासी सहस दो सत् सु पन।
मैं भक्ति से कर जोर विनऊँ, योग त्रय मन वचन तन।।41।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंच पद भूषित प्रथम जलगता चूलिका श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

थलगता थल में गमन, शुभ–अशुभ की चर्चा रही।
शुभ मंत्र–तंत्र जप–तप सु चर्या, की सरल कथनी कही।।
पद कोटि दो नौ लाख उन्यासी, सहस द्वय सत् सु पन।
मैं भक्ति सौं कर जोर विनऊँ, योग त्रय मन वचन तन।।42।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंच पद भूषित द्वितीय थलगता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया गता माया का वर्णन, इन्द्रजाल विद्या महा।
शुभ मंत्र तंत्र जप–तप सु चर्या, का सरल वर्णन रहा।।
पद कोटि द्वय नव लाख उन्यासी, सहस्र द्वय सत् सु पन,
मैं भक्ति सौं कर जोर विनऊँ, योग त्रय मन वचन तन।।43।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंच पद भूषित तृतीय मायागता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूप गता है अश्व मृग सिंह, चित्रकार अरु धातु मय।
शुभ तंत्र मंत्र लेपादि वर्णन, पूर्ण रहा जिसमें निश्चय।।
पद कोटि द्वय नव लाख उन्नासी, सहस्र द्वय सत् सु पन।
मैं भक्ति सौं कर विनऊँ, योग त्रय मन वचन तन।।44।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंच पद भूषित चतुर्थ रूपगता चूलिका श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाश गता पंचम सु भेद शुभ, नभ में गमन थल सम रहा।
शुभ यंत्र तंत्र अरू तपश्चर्या, का कथन जिसमें कहा।।
पद कोटि द्वय नव लाख, उन्यासी सहस सत् द्वय सु पन।
मैं भक्ति सौ कर जोर विनऊँ, योग त्रय मन वचन तन।।45।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंच पद भूषित पंचम आकाश गता चूलिका श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(वीर छंद)

पंच चूलिका की संख्या का, वर्णन करते हैं जिन ईश।
दश करोड़ सुलाख अड़तालिस, सहस्र छियानवे अरु पच्चीस।।
श्रुतज्ञान को पाने हेतु, अर्घ्य समर्पित करता मन।
श्रुत ज्ञानी बन जाऊँ भगवन्, भाव सहित करता पूजन।।46।।

ॐ ह्रीं दश कोटि अष्ट चत्वारिंशत् लक्ष षट् नवति सहस्र पंचविंशति पद भूषित पंच चूलिका श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टिवाद के सर्व भेद की, संख्या का करते गुणगान।
एक अरब वसु कोटि साठ हैं, लाख सहस अरु तीस प्रमाण।।
श्रुत ज्ञान को पाने हेतु, अर्घ्य समर्पित करता मन।
श्रुत ज्ञानी बन जाऊँ भगवन्, भाव सहित करता पूजन।।47।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक शत् कोटि षष्टि लक्ष षट् सहस्र पद भूषित पंच भेद परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग पूर्वगत चूलिका सहित दृष्टिवाद श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा।

अर्घ्यावली (पंचम कोष्ठ) अग्रायणी पूर्व के भेद

(अडिल्य–छन्द)

अग्रायणी पूर्व के भेद अब जानिए।
आनुपूर्वी के नाम अर्थ पहिचानिए।।
सद् प्रमाण वक्तव्य और अधिकार है।
द्रव्य भाव श्रुत का जो शुभ आधार है।।

(पंचम कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(जोगीरासा चाल)

आनुपूर्वी के तीन भेद हैं, पहला पूर्वानुपूर्वी।
दूजो पश्चातानुपूर्वी है, तृतीय यथातथ्यानुपूर्वी।।
लोम विलोम प्रतिलोम भेद हैं, सुक्रम अक्रम जानों।
भेद और प्रति भेद बहुत हैं, श्रुत ज्ञान सब मानों।।48।।

ॐ ह्रीं प्रथम आनुपूर्वी त्रय भेद युक्त श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके द्वारा अर्थ ज्ञान हो, उसको नाम कहा है।
द्रव्य निमित्तिक क्रिया निमित्तिक, आदि रूप रहा है।।49।।

ॐ ह्रीं द्वितीय अर्थ भेद श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं प्रमाण के भेद बहुत से, लौकिक लोकोत्तर आदी।
स्व पर प्रकाशक भी कहलाता, प्रमेय प्रमाता श्रुत वादी।।50।।

ॐ ह्रीं तृतीय प्रमाण भेद श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं वक्तव्य के भेद अनेकों, स्याद्वाद से हो पहिचान।
अल्प शब्द में अर्थ अनन्तक, स्यात् से हो वस्तु का ज्ञान।।51।।

ॐ ह्रीं चतुर्थ वक्तव्यता भेद श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो निश्चित होता है उसको, सदा कहा जाता है अर्थ।
उनका जो अधिकार कहा है, कथन रहा है विविध समर्थ।।52।।

ॐ ह्रीं पंचम अधिकार भेद श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली (षष्ठम् कोष्ठ) अर्थाधिकार के भेद

अर्थ अधिकार के भेद, कहे हैं चौदह भाई।
सामायिक स्तवन वन्दना प्रतिक्रमण उपाई।।
वैनयिक कृतिकर्म और शुभ महाकल्प है।
उत्तराध्यन अरू दशवैकालिक कल्प्याकल्प है।
कल्पव्यवहार अरु महा निषधिका पुण्डरीक है।
महापुण्डरीक और प्रकीर्णक मंगलीक है।

(षष्ठम् कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

प्रकीर्णक (अंग बाह्य के भेद)

(वीर छन्द)

पहला सामायिक समतामय, संक्लेश बिन सुविध विचार।
पाप योग को पूर्ण त्यागकर, काल भाव है जिसका सार।।
नामस्थापना द्रव्य क्षेत्र उपसर्ग, आदि में समता भाव।
नहि ममत्व है मन में किचिंत्, सम्यक् दर्शन मय स्वभाव।।53।।

ॐ ह्रीं प्रथम सामायिक प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय संस्तवन चौबिस जिन को, वन्दन सहित सविधि संस्थान।
अतिशय अरू कल्याणक का शुभ, जिसमें वर्णन है अभिराम।।54।।

ॐ ह्रीं द्वितीय संस्तवन प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतिय वन्दना एक–एक जिन, की संस्तुति का अवलम्बन।
अनुपम जिसमें कथन किया है, चैत्य चैत्यालय का वन्दन।।55।।

ॐ ह्रीं तृतीय वन्दना प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिक्रमण चौथा प्रमाद बिन, सप्त भेद युत विमल महान्।
रात्रि दिवस पक्ष चौमासिक, वार्षिक युग उत्तम पहिचान।।56।।

ॐ ह्रीं चतुर्थ प्रतिक्रमण प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैनयिक भेद पंचम मंगलमय, विनय भाव है पंच प्रकार।
दर्शन ज्ञान चारित्र सुतप अरू, पंचम कहा भेद उपचार।।57।।

ॐ ह्रीं पंचम वैनयिक प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम दशवैकालिक पावन, यति आचार का जिसमें सार।
बाह्य क्रिया हो सम्यक् सारी, नहीं लगें व्रत में अतिचार।।58।।

ॐ ह्रीं षष्टम दशवैकालिक प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृतीकर्म सप्तम में पूजन, परमेष्ठी पांचों का सार।
शिरोनति प्रभु की प्रदक्षिणा, द्वादश आवर्त आदि विस्तार।।59।।

ॐ ह्रीं सप्तम कृतिकर्म प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम उत्तराध्ययन है अनुपम, बाइस परिषह जय लक्षण।
चउ प्रकार परकृत उपसर्ग जय, करने का जिसमें वर्णन।।60।।

ॐ ह्रीं अष्टम उत्तराध्ययन प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवम कल्प–व्यवहार प्रकीर्णक, योग्य आचरण योग्य क्रिया।
दोषों के प्रायश्चित्त की विधि अरु, प्रख्यात साधु की सर्व क्रिया।।61।।

ॐ ह्रीं नवम कल्प–व्यवहार प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्प्याकल्प प्रकीर्णक दशवां, सम्यक् चारित का व्याख्यान।
द्रव्यक्षेत्र अरूकाल भाव से, योग्यायोग्य करें धर ध्यान।।62।।

ॐ ह्रीं दशम कल्प्याकल्प्य प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाकल्प ग्याहरवां जानो, शक्ति संहनन मुनि के योग्य।
द्रव्य क्षेत्र आदि का वर्णन, भाव त्याग कर रहा अयोग्य।।63।।

ॐ ह्रीं एकादशम महाकल्प प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहरवां पुण्डरीक भवन अरु, व्यन्तर ज्योतिष कल्पाचार।
देवों के उत्पाद का कारण, त्याग सुतप व्रत का आधार।।64।।

ॐ ह्रीं द्वादशम पुण्डरीक प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महापुण्डरीक अंग तेरहवां, इन्द्र प्रतीन्द्रों का उत्पाद।
सुतप ध्यान आचरण आदि शुभ, उत्तम व्रत होते हैं ज्ञात।।65।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशम महापुण्डरीक प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदहवां है भेद निषधिका, प्रायश्चित्तादि प्रमाद वर्णन।
सबके गुण दोषों का ज्ञायक, कभी न हो फिर भाव मरण।।66।।

ॐ ह्रीं चतुर्दशम निषधिका प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंग बाह्य के भेदों की अक्षर संख्या

अंग बाह्य के भेद सु चौदह, की अक्षर संख्या हो ज्ञात।
वसु कोटी लख एक सहस वसु, शतक पचहत्तर है संख्यात।।
लाख पच्चीस सहस्र तीन अरु, तीन शतक अस्सी श्लोक।
पन्द्रह अक्षर सहित जानिए, अंग बाह्य का है सब योग।।67।।

ॐ ह्रीं चतुर्दशम निषधिका प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली (सप्तम् कोष्ठ) अर्थ लिंग सुश्रुत के बीस भेद

(भाव श्रुतज्ञान) शम्भू छन्द

शुभम् अर्थ लिंग सुश्रुत के हैं, उत्तम बीस भेद सुखधाम।
'विशद' भाव से करते हैं हम, उनको बारम्बार प्रणाम।।
पर्यय अक्षर पद संघात अरु, प्रतिपत्ति है शुभ अनुयोग।
प्राभृतिक–प्राभृतिक अरु प्राभृतिक, वस्तु पूर्व सहित दश योग।।
सर्व समास सहित होने पर, बीस भेद की संख्या जान।
जिनश्रुत के हैं भेद अनेकों, संख्यातीत अनन्त प्रमाण।।

(सप्तम् कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

पर्यय ज्ञान है निरावरण शुभ, निगोदिया जीव में भी रहता।
अक्षर का अनन्तवाँ भाग है, नित्योदघाटित हो बहता।।68।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त पर्यय भाव श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्यय ज्ञान के ऊपर अक्षर, श्रुतज्ञान के पूरब पूर्व।
जितने भेद ज्ञान के होते, पर्यय समास कहलाए अपूर्व।।69।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्य ध्वनि प्राप्त श्री पर्यय समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदी श्रुत ज्ञान को बन्धु, कहते हैं अक्षर श्रुत ज्ञान।
नर पिशाच आदी प्राणी सब, करते हैं इसका सम्मान।।70।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्य ध्वनि अक्षर भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अक्षर ज्ञान के ऊपर सारे, सुपद ज्ञान के पूरब पूर्व।
जितने भेद ज्ञान के होते, अक्षर समास कहलाए अपूर्व।।71।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त अक्षर समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके द्वारा अर्थ बोध हो, वह कहलाता पद श्रुतज्ञान।
अर्थ सु पद मध्यम प्रमाण पद, तीन भेद मय होता जान।।72।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त पद भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

सुपद ज्ञान के ऊपर सारे, संघात ज्ञान के पूरब पूर्व।
जितने भेद ज्ञान के होते, पद समास कहलाए अपूर्व।।73।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त पद समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक गति का वर्णन करता, कहलाता है वह संघात।
गत्यागतिक भेद की संख्या, हो जाती है उससे ज्ञात।।74।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त संघात भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संघात ज्ञान के ऊपर सारे, प्रतिपत्ति सुज्ञान के पूर्व।
जितने भेद ज्ञान के होते, संघात समास कहलाए अपूर्व।।75।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त संघात समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संख्यातों संघात मिलाकर, होता प्रतिपत्ति श्रुत ज्ञान।
चार गती का जिसमें होता, सारा का सारा व्याख्यान।।76।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त प्रतिपत्तिक भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिपत्ति के ऊपर सारे, अनुयोग ज्ञान के पूरब पूर्व।
जितने भेद ज्ञान के होते, प्रतिपत्ति समास कहलाए अपूर्व।।77।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त प्रतिपत्तिक समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संख्यातों प्रतिपत्ति मिलकर, होता है अनुयोग प्रधान।
चौदह मार्गणाओं का भी शुभ, जिससे हो जाता है ज्ञान।।78।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त अनुयोग भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुयोग ज्ञान के ऊपर सारे, प्राभृत–प्राभृत ज्ञान के पूर्व।
जितने भेद ज्ञान के होते, अनुयोग समास कहलाए अपूर्व।।79।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त अनुयोग समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुयोग में अक्षर की वृद्धि, करके चतुरादि अनुयोग
वृद्धि होने पर हो जाता, प्राभृत–प्राभृत भेद सुयोग।।80।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त प्राभृतक–प्राभृतक भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राभृत–प्राभृत में अक्षर की, वृद्धि से होता श्रुतज्ञान।
प्राभृत–प्राभृत समास कहलाता, कहता वीतराग विज्ञान ।।81।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त प्राभृतक–प्राभृतक समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबिस प्राभृत–प्राभृत मिलकर, बनता है प्राभृत श्रुतज्ञान।
श्री जिनेन्द्र ने जैनागम में, इसका किया शुभम् व्याख्यान।।82।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त प्राभृतक भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राभृत में अक्षर बृद्धी से, वृद्धिंगत होता श्रुत ज्ञान।
प्राभृत समास कहलाया पावन, ऋषिगण करते हैं गुणगान।।83।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त प्राभृतक समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस–बीस प्राभृत मिलकर के, बन जाती है वस्तु एक।
एक सौ पंचानवे वस्तु का फल, कहा चौदह पूर्वों में नेक।।84।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त वस्तु भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वस्तु में अक्षर वृद्धि से, वृद्धिंगत होता श्रुतज्ञान।
वस्तु समास कहलाता अनुपम, आगम में यह रहा विधान।।85।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त वस्तु समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शास्त्र अर्थ का पोषक है जो, कहा गया पूर्व श्रुतज्ञान।
भाव सहित श्रुत का आराधक, परम्परा से हो गुणवान।।86।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त पूर्व भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व ज्ञान वृद्धिंगत होकर, बन जाता है पूर्व समास।
वीतराग विज्ञानी बनकर, कर देता कर्मों का नाश।।87।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त पूर्व समास भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐकारमय दिव्य देशना, परमागम है द्रव्य सुज्ञान।
निज अनुभव चैतन्य चित्त में, भाव ज्ञान से हो कल्याण।।
द्रव्य ज्ञान को सुनकर मन में, भाव हुए जो भी पावन।
'विशद' भाव श्रुत हुआ अलौकिक, श्रुत का करते अभिनन्दन।।88।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्राप्त अर्थ लिंग विंशति भेद सहित भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली (अष्टम् कोष्ठ)

चार कहे अनुयोग शुभ, द्वादशांग श्रुत सार।
अक्षर की गणना अगम, श्रुत है अपरम्पार।।

(अष्टम् कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चार अनुयोग

प्रथमानुयोग में पुण्य पुरूष की, जीवन गाथा का वर्णन।
बोधि समाधि का निधान है, अरु पुराण का श्रेष्ठ कथन।।89।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि प्रथमानुयोग रूप श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

युगपद लोकालोक झलकता, चतुर्गति का शुभ वर्णन।
करणानुयोग शास्त्र का करते, करण–चरण द्वारा वन्दन।।90।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि करणानुयोग रूप श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मुनी और श्रावक की चर्या, का जिससे होता है ज्ञान।
चरणानुयोग शुभ कहा गया वह, जो है वीतराग विज्ञान।।91।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि चरणानुयोग रूप श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जीवाजीव सुतत्त्व कहे हैं, बन्ध मोक्ष सु पुण्य अरु पाप।
द्रव्यानुयोग शास्त्र के द्वारा, इनको जान लीजिए आप।।92।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि द्रव्यानुयोग रूप श्रुत ज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दिव्य देशना श्री जिनेन्द्र की, चउ अनुयोग स्वरूप कही ।
प्रथमानुयोग शुभ करण चरण, अउ द्रव्यानुयोग स्वरूप रही।।93।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि चऊ अनुयोग स्वरूप सम्पूर्ण श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशांग श्रुत की पद संख्या

एक सौ बारह कोटि तिरासी, लाख सहस हैं अट्ठावन।
पाँच पदों से युक्त ज्ञान को, 'विशद' भाव से अभिनन्दन।।94।।

ॐ ह्रीं श्री जिनवर कथित गणधर गूंथित द्वादशांग श्रुत द्वादशाधिक शत् कोटि त्र्यशीति लक्ष अष्ट पंचाशत् सहस्र पंच पद रूप श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मूल एवं संयोगी अक्षर

प्राकृत वर्ण माला के चौंसठ, संयोगी अक्षर हैं ख्यात।
काल अनादी से वर्णित हैं, आगम से होता है ज्ञात।।
एक आठ चउ–चउ षट् सप्तम, चउ–चउ शून्य सप्त त्रय सात।
शून्य और नव पाँच–पाँच इक, छह इक पाँच रहे विख्यात।।
यह कुल बीज प्रमाण अंक हैं, धन्य रहे आगम श्रुतज्ञान।
तीन योग से नमन् हमारा, रहे हृदय में इनका ध्यान।।95।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत गणधर गूंथित सम्पूर्ण मूल एवं संयोगी अक्षर स्वरूप श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्द श्रृंखला से निर्मित हो, कहलाता है वह श्रुतज्ञान।
द्रव्य भाव श्रुत भेद रहे दो, होते दोनों ज्ञान प्रमाण।।
पुद्गल द्रव्य रूप अक्षरमय, जो भी है श्रुत का वर्णन।
द्रव्य सुश्रुत कहलाता पावन, श्रुत को है शत्–शत् वन्दन।।96।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्य ध्वनि प्राप्त द्रव्य भाव श्रुतज्ञानेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जापः–ॐ ह्रीं श्री जिन मुखोद्भूत द्रव्य भाव श्रुत रूप सरस्वतीदेव्यै नमः स्वाहा।

जयमाला

दोहा – **जिनवाणी को नमन् कर, काटूँ जग जंजाल।**
श्रुत ज्ञान की भाव से, गाते हैं जयमाल।।

(ताटंक छन्द)

सोलह कारण भाय भावना, बन जाते तीर्थंकर देव।
कर्म घातिया नाश किए फिर, नन्त चतुष्टय पाते एव।।

एक क्षेत्र में तीर्थंकर जिन, एक काल में होते एक।
ऋषभनाथ से महावीर तक, केवलज्ञानी हुए अनेक।।
खिरती दिव्य देशना पावन, ॐकारमय दिव्य अनूप।
अनक्षरी होकर अक्षरमय, जीव समझते निज अनुरूप।।
सर्व महा भाषा अष्टादश, सात शतक भाषाएँ शेष।
अर्ध–मागधी भाषा में है, श्री जिनवाणी का उपदेश।।
छह–छह घड़ी दिव्य ध्वनि द्वारा, तीन काल में हो उपदेश।
भव्य जीव के पुण्य योग से, असमय में भी होय विशेष।।
गणधर झेल के रचना करते, भिन्न मुहूर्त में भिन्न प्रकार।
शेष समय में व्याख्या करते, भवि जीवों का ले आधार।।
भव्य जीव सुनकर जिनवाणी, करते यथा–योग्य श्रद्धान।
ज्ञान और चारित्र प्राप्त कर, करते निज आतम का ध्यान।।
केवल ज्ञानी को होता है, अक्षय केवल ज्ञान अनन्त।
दिव्य देशना में खिरता है, उस अनन्त का भाग अनंत।।
दिव्य ध्वनि में जितना खिरता, गणधर झेल पाएँ कुछ अंश।
गणधर ने जितना झेला है, उसका रच पाते कुछ अंश।।
महावीर का शासन है यह, उनकी वाणी का है ज्ञान।
गौतम स्वामी ने झेली है, दिव्य देशना सह सम्मान।।
मोक्ष गमन पर महावीर के, गौतम ने कीन्हा उपदेश।
बारह बारह वर्ष सुधर्माचार्य ने दीन्हा शुभ–संदेश।।
जम्बूस्वामी वर्ष सु अड़तिस, तक भव्यों को दीन्हा ज्ञान।
अन्य केवली श्रीधर आदि ने, कीन्हा है जग का कल्याण।।
विष्णू नन्दिमित्र अपराजित, श्रुत केवली गोवर्धन।।
भद्रबाहु तक पाँच सौ वर्षों, करते रहे श्रुत का वर्णन।
ग्यारह अंग पूर्व दशधारी, ग्यारह हुए मुनिराज प्रधान।
इकशत तेरासी वर्षों तक, ज्ञान दान दे किया महान्।।

दो सौ तीस वर्ष में ग्यारह, अंग महाधारी ऋषिराज।
श्री नक्षत्र जयपाल पाण्डु ध्रुव सेन कंस पाँचो मुनिराज।।
श्री सुभद्र यशोभद्र और यशो बाहू लोहाचार्य मुनीश।
इकशत अष्टादश वर्षों में, आचारांग धर हुए ऋशीष।।
अंग पूर्व धारी मुनियों का, बाद में इसके हुआ वियोग।
एक अंग के कुछ अंशों का, कुछ संतों ने पाया योग।।
कुन्द–कुन्द धरसेन गुरू अरु, पुष्पदन्त श्री भूतबली।
आगम के ज्ञाता संतों से, श्रुत की धारा अग्र चली।।
नगर अंकलेश्वर में पावन, षट् खण्डागम रचा महान्।
पुष्पदन्त और भूतबली ने, लिपिबद्ध कीन्हा श्रुतज्ञान।।
ज्येष्ठ शुक्ल पचंमी सुदिन को, शास्त्र लेख का हुआ विराम।
बना पर्व का दिन मंगलमय, श्रुत पंचमी पड़ा शुभ नाम।।
मंगलमय जिनवाणी माता, जीवन मंगलमय कर दो।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण से, हृदय सुघट मेरा भर दो।।
दो हमको आशीष हे माता!, उर में भरो भेद विज्ञान।
स्वपर भेद विज्ञान के द्वारा, विशद ज्ञान से हो कल्याण।।
यथा शक्ति श्रुत का आराधन, किया भाव से जो गुणगान।
हे माता! मैं करूँ वन्दना, शीघ्र प्राप्त हो पद निर्वाण।।

(छन्द घत्तानन्द)

जय जय जिन चंदा, आनन्दकन्दा, दिव्य ध्वनि तव पावन है।
जय श्रुतस्कन्धा, सुगुण अनन्ता, श्रुत ज्ञान मन भावन है।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत दिव्यध्वनि सम्पन्न सम्पूर्ण परम श्रुतज्ञानाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा – जिनवाणी को पूजकर, हृदय जगे श्रद्धान।
अष्टकर्म का नाश कर, पाएँ केवल ज्ञान।।

(इत्याशीर्वाद) पुष्पांजलि क्षिपेत्

श्री सरस्वती (जिनवाणी) चालीसा

दोहा– अर्हत् सिद्धाचार्य गुरु, उपाध्याय जिन संत।
चैत्य चैत्यालय धर्म जिन, जिनश्रुत कहा अनन्त।।
दिव्य ध्वनि जिनदेव की, सरस्वती है नाम।
चालीसा लिखते यहाँ, करके विशद प्रणाम।

(चौपाई)

जय–जय सरस्वती जिनवाणी, तुम हो जन–जन की कल्याणी।
प्रथम भारती नाम कहाया, द्वतिय सरस्वती शुभ गाया।।
तृतिय नाम शारदा जानो, चौथा हंसगामिनी मानो।
पञ्चम विदुषां माता गाई, वागीश्वरि छठवाँ शुभ पाई।।
सप्तम नाम कुमारी गाया, अष्टम ब्रह्मचारिणी पाया।
जगत माता नौमी शुभ जानो, दशम नाम व्राह्मिणि पहिचानो।।
ब्रह्माणी ग्यारहवाँ भाई, बारहवाँ वरदा सुखदायी।
नाम तेरहवाँ वाणी गाया, चौदहवाँ भाषा कहलाया।।
पन्द्रहवाँ श्रुतदेवी माता, सोलहवाँ गौरी दे साता।
सोलह नाम युक्त जिनमाता, सबके मन की हरे असाता।।
द्वादशांग युत वाणी गाई, चौदह पूर्व युक्त बतलाई।
आचारांग प्रथम कहलाया, दूजा सूत्र कृतांग बताया।।
स्थानांग तीसरा जानो, चौथा समवायांग बखानो।
व्याख्या प्रज्ञप्ति है पंचम, श्रातृकथा शुभ अंग है षष्ठम।।
उपाशकाध्ययन अंग सातवाँ, अन्तःकृद्दश रहा आठवाँ।
नवम् अनुत्तर दशांग बताया, दशम प्रश्न व्याकरण कहाया।।
सूत्र विपांग ग्यारहवाँ जानो, दृष्टिवाद बारहवाँ मानो।
पाँच भेद इसके बतलाए, पहला शुभ परिकर्म कहाए।।
सूत्र दूसरा भेद बखाना, भेद पूर्वगत तृतिय माना।
चौथा प्रथमानुयोग कहाया, पंचम भेद चूलिका गाया।।
भेद पूर्वगत के शुभकारी, चौदह होते मंगलकारी।
पहला उत्पाद पूर्व बखाना, पूर्व अग्राणीय द्वितिय माना।।

तीजा वीर्य प्रवाद कहाया, अस्तिनास्ति प्रवाद फिर गाया।
पंचम ज्ञान प्रवाद बखाना, सत्य प्रवाद छठा शुभ माना॥
सप्तम आत्म प्रवाद है भाई, कर्म प्रवाद अष्टम सुखदायी।
नौवा प्रत्याख्यान बताया, विद्यानुवाद दशम कहलाया॥
कल्याणवाद ग्यारहवाँ जानो, प्राणावाय बारहवाँ मानो।
क्रिया विशाल तेरहवाँ भाई, लोक बिन्दुसार अन्तिम गाई॥
ऋषभादिक चौबिस जिन गाये, वीर प्रभु अन्तिम कहलाए।
ॐकारमय श्री जिनवाणी, तीन लोक में है कल्याणी॥
गौतम गणधर ने उच्चारी, भवि जीवों को मंगलकारी।
तीन हुए अनुबद्ध केवली, पाँच हुए फिर श्रुत केवली॥
फिर आचार्यों ने वह पाई, परम्परा यह चलती आई।
कलीकाल पञ्चम युग आया, अंग पूर्व का ज्ञान भुलाया॥
ज्ञाता आगांश के शुभ भाई, धरसेन स्वामी बने सहाई।
भूतबली पुष्पदन्त बुलाए, षट्खण्डागम ग्रन्थ लिखाए॥
धवलादिक टीका शुभकारी, श्रुत का साधन बना हमारी।
शुभ अनुयोग चार बतलाए, चतुर्गति से मुक्ति दिलाए॥
प्रथमानुयोग प्रथम कहलाया, द्वितिय करुणानुयोग बताया।
चरणानुयोग तीसरा जानो, द्रव्यानुयोग चौथा पहिचानो॥
अनेकांतमय अमृतवाणी, स्याद्वाद मय श्री जिनवाणी।
जिसमें हम अवगाहन पाएँ, अपना जीवन सफल बनाएँ॥
सम्यक् श्रुत पा ध्यान लगाएँ, अनुपम केवलज्ञान जगाए।
'विशद' भावना है यह मेरी, मिट जाये भव-भव की फेरी॥

दोहा- श्रद्धा भक्ती से पढ़े, चालीसा शुभकार।
लौकिक आध्यात्मिक सभी, पावे ज्ञान अपार॥
पच्चिस सौ सैंतीस यह, कहा वीर निर्वाण।
'विशद' भाव से यह किया, आगम का गुणगान॥

जाप- ॐ ह्रीं श्रां श्रूं श्रः हं सं थः थः ठः ठः ठः सरस्वती भगवति विद्या प्रसादं कुरु-कुरु स्वाहा।

जिनवाणी की आरती

(तर्ज-हो बाबा हम सब उतारें तेरी आरती...)

आज करें हम जिनवाणी की, आरति मंगलकारी।
दीप जलाकर घृत के लाए, हे माँ तेरे द्वार ॥
हो माता हम सब उतारे तेरी आरती...

तीर्थंकर की दिव्य देशना, ॐकारमय प्यारी।
सुख शांति सौभाग्य प्रदायक, जन-जन की मनहारी॥1॥
हो माता...

मिथ्या मोह नशानेवाली, है जिनवाणी माता।
ध्याने वाले जग जीवों को, देने वाली साता॥2॥
हो माता...

गणधर द्वारा झेली जाती, तीर्थंकर की वाणी।
मोक्ष मार्ग दिखलाने वाली, सर्व जगत कल्याणी॥3॥
हो माता...

जो जिनवाणी माँ को ध्याते, वे सुख शांति पाते।
पूजा अर्चा करने वाले, केवल ज्ञान जगाते॥4॥
हो माता...

महिमा सुनकर के हे माता, द्वार आपके आये।
'विशद' भाव से आरती करके, सादर शीश झुकाए॥5॥
हो माता...

सुख शांति सौभाग्य बढ़ाकर, मुक्ती राह दिखाओ।
देकर के आशीष हे माता, शिवपुर में पहुँचाओ॥6॥
हो माता...

***